

**एचएमटी लिमिटेड व अन्य**

**बनाम**

**मुदाप्पा व अन्य**

8 फरवरी, 2007

( सी.के. ठक्कर और लोकेश्वर सिंह पांटा, न्यायधिपति )

भूमि अधिग्रहण:

कर्नाटक औद्योगिक क्षेत्र विकास अधिनियम, 1966:

धारा 28 (1)-भूमि अधिग्रहण-सार्वजनिक उद्देश्य के लिए-प्रारंभिक अधिसूचना जारी करना-एक घड़ी कारखाना स्थापित करने के लिए भूमि का एक हिस्सा अधिग्रहित किया गया था-हालांकि, घड़ी कारखाने के महाप्रबंधक ने मालिक की पूरी भूमि का कब्जा ले लिया-मालिक ने स्वामित्व और अतिरिक्त भूमि के कब्जे की घोषणा के लिए एक वाद दायर किया-अधीनस्थ न्यायालय ने वाद डिक्री किया-इसके खिलाफ अपील खारिज कर दी गयी-निष्पादन अदालत ने अतिरिक्त भूमि का कब्जा मालिक को सौंपने का निर्देश दिया-निगरानी स्वीकार की गई और मामले को निष्पादन न्यायालय को जनरल मैनेजर को सुनवाई का अवसर प्रदान करने का निर्देश देते हुए प्रकरण को रिमांड किया गया । इस दौरान, महाप्रबंधक ने

राज्य सरकार से सार्वजनिक उद्देश्य के लिए भूमि अधिग्रहण करने के लिए धारा 28 (1) के तहत एक अधिसूचना जारी करने का अनुरोध किया, यानी उद्योग के विकास के उद्देश्य से-हालांकि, एकल न्यायाधीश ने दुर्भावनापूर्ण आधार पर उक्त प्रारंभिक अधिसूचना को रद्द कर दिया क्योंकि अधिकारियों ने भूमि के मालिक को वंचित कर दिया, जिसे उसके पक्ष में कब्जे के लिए डिक्री मिली थी-शुद्धता सुनिश्चित की गयी : एक सक्षम अदालत द्वारा डिक्री पारित करना एक बात है और प्राधिकरण द्वारा वैधानिक शक्ति का प्रयोग पूरी तरह से एक अलग बात है-लेकिन, न्यायालय द्वारा एक डिक्री के बाद प्रारंभिक अधिसूचना जारी करना स्वतः इसे कमजोर और दुर्भावनापूर्ण नहीं बनाएगा-राज्य द्वारा प्रयोग की जाने वाली शक्ति वैधानिक प्रकृति की थी और मालिक के पक्ष में डिक्री के बावजूद, ऐसी अधिसूचना जारी की जा सकती थी-उच्च न्यायालय के फैसले को अपास्त कर दिया गया-भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894।

शब्द और वाक्यांशः

" तथ्यों में द्वेष, विधि में द्वेष "और कानूनी" दुर्भावनापूर्ण  
"-- का अर्थ समझाया गया। प्रतिवादीगण वादग्रस्त भूमि के मालिक थे। राज्य सरकार ने एक घड़ी फैंक्ट्री स्थापित करने के उद्देश्य से उक्त वादग्रस्त भूमि का एक हिस्सा

अधिग्रहित किया, हालाँकि अपीलकर्ताओं ने अप्रार्थीगण की पूरी भूमि पर कब्जा कर लिया।

अप्रार्थीगण ने स्वामित्व और अपीलार्थीगण द्वारा अनाधिकृत रूप से अधिग्रहित भूमि के कब्जे के लिए वाद प्रस्तुत किया। अधीनस्थ न्यायालय ने वाद डिक्री किया। जिसकी अपील खारिज कर दी गई। निष्पादन न्यायालय ने अपीलार्थी को अतिरिक्त भूमि का अप्रार्थीगण को कब्जा सौंपने का आदेश दिया गया। निगरानी याचिका स्वीकार की गयी और प्रकरण को निष्पादन न्यायालय को इस आदेश के साथ रिमाण्ड किया गया कि अपीलार्थीगण को सुनवाई का अवसर प्रदान करते हुए उचित आदेश पारित करे ।

इस बीच, अपीलार्थीगण ने राज्य सरकार से धारा 28(1) कर्नाटक औद्योगिक क्षेत्र विकास अधिनियम, 1966 की सार्वजनिक उद्देश्य यानि कि औद्योगिक विकास करने के लिए भूमि अधिग्रहण हेतु एक अधिसूचना जारी करने का निवेदन किया गया ।

उक्त अधिसूचना को उच्च न्यायालय में चुनौती दी गई थी। उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधिपति द्वारा अभिनिर्धारित किया कि अधिकारियों द्वारा दुर्भावनापूर्ण तरीके से शक्ति का प्रयोग किया गया था और अधिसूचना को इस आधार पर रद्द कर दिया कि अधिकारियों ने भूमि के मालिकों को

वंचित कर दिया, जिन्होंने कब्जे के आधार पर डिक्री प्राप्त की थी । खण्ड पीठ ने एकल न्यायाधीश के फैसले की पुष्टि की। इसलिए अपील प्रस्तुत की गयी ।

न्यायालय के समक्ष निम्नलिखित प्रश्न उठा:

क्या राज्य प्राधिकरणों की वैध कानून के तहत की गई अधिग्रहण की कार्यवाही को अवैध, गैरकानूनी या दुर्भावनापूर्ण कहा जा सकता है?

न्यायालय ने अपीलों का निपटारा करते हुए, अभिनिर्धारित किया

1. कर्नाटक औद्योगिक क्षेत्र विकास अधिनियम, 1966 के तहत जारी की गई अधिसूचना को रद्द करने में उच्च न्यायालय सही नहीं था, विशेष रूप से जब यह एक प्रारंभिक अधिसूचना थी जो कि इस आशय को दर्शाती थी कि राज्य सार्वजनिक प्रयोजन के लिए भूमि का अधिग्रहण करेगा, अर्थात् उद्योग के विकास के उद्देश्य से। [ पैरा 12] (370-एच; 371-ए)

2. एक सक्षम अदालत द्वारा डिक्री पारित करना एक बात है और प्राधिकरण द्वारा वैधानिक शक्ति का प्रयोग पूरी तरह से एक अलग बात है। यह संभव है कि प्रस्तुत साक्ष्य के आधार पर किसी भी मामले में निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए अभिलेख पर रखी गई सामग्री के अनुसार की गई कार्यवाही दुर्भावनापूर्ण या संपार्श्विक उद्देश्य से या शक्ति के दुरुपयोग में की गई है। लेकिन, न्यायालय द्वारा डिक्री के बाद प्रारंभिक अधिसूचना जारी करने से स्वतः ही यह कमजोर नहीं होगा और शक्ति का दुर्भावनापूर्ण

दुरुपयोग नहीं होगा। इसलिए, प्राधिकारियों द्वारा यह आपत्ति उठाया जाना सही था कि याचिका अपरिपक्व थी क्योंकि राज्य द्वारा अधिनियम की धारा 28 की उपधारा (1) के अंतर्गत अधिसूचना जारी कर भूमि को सार्वजनिक उद्देश्य यानि औद्योगिक विकास के लिए भूमि अधिग्रहण का आशय स्पष्ट कर दिया था ।[ पैरा 13] [371-एफ-एच]

3. इस प्रकार अधिनियम की धारा 28 की योजना भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894 के समान है जिसके तहत भूमि अधिग्रहण की प्रारंभिक अधिसूचना जारी की जाती है और भूमि में हित रखने वाले व्यक्तियों को सुनवाई का अवसर दिया जाता है और उसके बाद ही अंतिम अधिसूचना जारी की जा सकती है। अधिग्रहण के खिलाफ आपत्तियां उठाने के स्तर पर, यह प्रत्यर्थागण के लिए सभी तर्क रखने के लिए स्वतंत्र हैं । इस तरह की आपत्तियों के बावजूद, यदि राज्य द्वारा अंतिम अधिसूचना जारी की जाती है, तो उनके लिए उचित कदम उठाने का अधिकार है या संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत उच्च न्यायालय के समक्ष कार्यवाही की जा सकती है । [ पैरा 15] [373-डी-ई]

4. उच्च न्यायालय भी इस निष्कर्ष पर पहुंचने में सही नहीं था कि यद्यपि एक सक्षम न्यायालय द्वारा डिक्री पारित किये जाने के बाद इस अधिनियम के तहत राज्य द्वारा कोई अधिसूचना जारी नहीं की जा सकती थी। राज्य द्वारा प्रयोग की जाने वाली शक्ति वैधानिक प्रकृति की थी और

मालिकों के पक्ष में डिक्री के बावजूद, ऐसी अधिसूचना जारी की जा सकती थी। [ पैरा 16] [373-एफ]

आंध्र प्रदेश राज्य बनाम। गोवर्धनलाल पिट्टी, [2003] 4 एस. सी. सी. 739 पर विश्वास किया गया।

5. जहाँ द्वेष का आरोप राज्य पर लगाया जाता है, वहाँ यह वास्तव में द्वेष का मामला नहीं हो सकता है, या राज्य की ओर से व्यक्तिगत दुर्भावना या विरोध का मामला नहीं हो सकता है। यह केवल कानून में द्वेष हो सकता है, यानी कानूनी दुर्भावना। राज्य, यदि भूमि अधिग्रहण करना चाहता है, तो अपनी शक्ति का उपयोग वैधानिक उद्देश्य के लिए कर सकता है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए नहीं। [ पैरा 19] [374-ई-एफ]

आंध्र प्रदेश राज्य बनाम। गोवर्धनलाल पिट्टी, [2003] 4 एस. सी. सी. 739 पर विश्वास किया गया।

कानूनी रूप से परिभाषित शब्द और वाक्यांश जिनको लंदन बटरवर्थ (1989) के तृतीय संस्करण का उल्लेख किया गया है।

6. भूमि मालिकों के पक्ष में डिक्री पारित हो जाने से अपीलार्थीगण को विधि अनुरूप भूमि के अधिग्रहण के लिए कार्यवाही करना महशूस हुआ जिस पर राज्य को अधिनियम के अन्तर्गत कार्यवाही करने के लिए निवेदन किया गया और एक अधिसूचना जारी की गई । इस तरह के कार्य को अवैध नहीं कहा जा सकता है, विशेष रूप से जब अधिसूचना प्रारंभिक

प्रकृति की थी और अधिनियम के तहत मालिकों को सुनवाई का अवसर दिया जाना था। उच्च न्यायालय इस मामले में गलत था और याचिका को धारा 28 की उपधारा (1) के अंतर्गत अधिसूचना जारी किये जाने के स्तर पर स्वीकार कर ग्रहण किया जाना विधि अनुसार गलत था । [ पैरा 20] [374-एच; 375-ए]

7.1 . एकल न्यायाधीश के दृष्टिकोण को विधिक या विधि अनुरूप नहीं कहा जा सकता था। राज्य प्राधिकरणों को औद्योगिक क्षेत्र के विस्तार या उद्योग के विकास के बारे में न्यायालय के 'अवलोकन' के लिए सामग्री प्रस्तुत करने की आवश्यकता नहीं थी। निर्णित ऋणी से निष्पादन न्यायालय के समक्ष उद्योग के विस्तार के लिए भूमि की आवश्यकता के तर्क रखे जाने की अपेक्षा नहीं थी । इसलिए एकल न्यायाधीश के साथ जो कारण था, उसे अधिसूचना को रद्द करने का आधार नहीं बनाया जा सकता था [पैरा24] [375-एच; 376-ए]

7.2. एकल न्यायाधीश का इस तरह का दृष्टिकोण अपनाया जाना और अधिसूचना को रद्द किया जाना गलत था । इस तरह के दृष्टिकोण को बनाये रखने से अधिनियम के तहत वैधानिक प्रावधान या अन्य अधिनियमों में (उदाहरण के लिए, भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894) के प्रावधान निरर्थक और बेकार होंगे । एकल न्यायाधीश यह मानने में गलत थे कि राज्य प्राधिकारी धारा 1 की उपधारा (3), धारा 3 की उपधारा (1)

और धारा 28 की उपधारा (1) के अतर्गत समानांतर अधिसूचनाएं जारी करने में गलत था । इस तरह की अधिसूचनाएं जारी करने में कोई रोक नहीं थी और न ही ऐसे कोई प्रावधान दिखाये गये जो राज्य को ऐसा करने से रोकते हों । इस आधार पर भूमि मालिकों को कोई मदद प्राप्त नहीं हो सकती । [ पैरा 28] [377-एच; 378-ए-बी]

**सिविल अपीलीय अधिकारिता सिविल अपील सं. 2000 की 7059-7060**

कर्नाटक उच्च न्यायालय, बेंगलोर द्वारा डब्ल्यू. ए. नं./ 1998 के 5051-5052 में पारित अंतिम निर्णय और आदेश दिनांक 28.10.1998 के विरुद्ध

अपीलार्थियों की ओर से एस. एन. भट, एन. पी. एस. पंवार और डी. पी. चतुर्वेदी।ई. सी. विद्या सागर, विकास राजीपुरा, बी. के. चौधरी और किरण सूरी प्रत्यर्थीगण की ओर से।

न्यायालय का निर्णय **सी. के. ठक्कर, न्यायाधिपति.** के द्वारा सुनाया गया था

1. ये दोनों अपील कर्नाटक उच्च न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा रिट याचिका संख्या 5580/1998 में पारित निर्णय दिनांक 8 सितम्बर 1998 किया गया और जिसकी पुष्टि खण्डपीठ द्वारा रिट अपील सं. 5051-5052/1998 में आदेश दिनांक 28 अक्टूबर 1998 को की गई ।



2. आलोच्य आदेश द्वारा, उच्च न्यायालय ने मूल याचिकाकर्ता के इस तर्क को बरकरार रखा और 13 नवंबर, 1997 को कर्नाटक राज्य द्वारा कर्नाटक औद्योगिक क्षेत्र विकास अधिनियम, 1966 की धारा 28 की उप-धारा (1) के तहत (जिसे इसके बाद "अधिनियम" के रूप में संदर्भित किया गया है) जारी की गई अधिसूचना को रद्द किया गया ।

3. अपीलों में उठाए गए विवाद की सराहना करने के लिए प्रासंगिक तथ्यों को बताना आवश्यक है । प्रत्यर्थीगण मृतक अक्काहोनम्मा के उत्तराधिकारी और विधिक प्रतिनिधि हैं जिनकी वर्ष 1993 में कहीं मृत्यु हो गई थी। वह देवरायपटना, तुमकुर तालुक में स्थित 2 एकड़, 37 गुंठा भूमि, सर्वेक्षण सं. 113/3 की मालिक थी । वर्ष 1978 में, औद्योगिक क्षेत्र विकास बोर्ड, कर्नाटक (संक्षेप में 'बोर्ड') ने देवरायपटना में स्थित विभिन्न सर्वेक्षण संख्या की 120 एकड़ भूमि का अधिग्रहण एच. एम. टी. लिमिटेड (इसमें अपीलार्थी) नामक एक घड़ी कारखाने की स्थापना के लिए किया गया । अधिग्रहण की कार्यवाही में 2 एकड़ में से 1 एकड़, 38 गुंठा, सर्वेक्षण संख्या 113/3 के 37 गुंठा की भूमि भी अधिग्रहित की गई थी। 29 गुंठा तक की शेष भूमि का अधिग्रहण नहीं किया गया था। हालाँकि, यह प्रत्यर्थीगण का मामला था कि महाप्रबंधक, एच. एम. टी. ने 2 एकड़, 37 गुंठों के पूरे क्षेत्र पर कब्जा कर लिया, भले ही वह केवल 1 एकड़, 38 गुंठों की भूमि पर कब्जा करने का हकदार था। इस प्रकार उन्होंने अनधिकृत रूप से 39 गुंठा भूमि पर कब्जा कर लिया। इसलिए, महाप्रबंधक, एच. एम. टी. से 39 गुंठों

का कब्जा मालिकों को वापस करने का अनुरोध किया गया था। हालांकि, उन्होंने कब्जा सौंपने से इन्कार कर दिया। 20 जुलाई, 1984 के एक पत्र द्वारा बोर्ड ने भूमि के मालिकों से कारण बताने का आह्वान किया कि अधिग्रहित भूमि की वास्तविक सीमा पर एच. एम. टी. द्वारा कब्जा क्यों नहीं रखा जाना चाहिए। मालिकों ने बोर्ड के निवेदन को नहीं माना और अधिकारियों के खिलाफ स्वामित्व की घोषणा और भूमि के कब्जे के लिए वाद सं. 341/1985 दायर किया । अधीनस्थ न्यायालय ने वाद डिक्री किया। उक्त डिक्री के खिलाफ दायर अपील प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा खारिज कर दी गई। उक्त आदेश को चुनौती नहीं दी गई और डिक्री अंतिम हो गई। मालिकों द्वारा निष्पादन की कार्यवाही शुरू की गई थी और 13 जून, 1997 के एक आदेश द्वारा निष्पादन न्यायालय ने एच. एम. टी. को भूमि का वास्तविक और शांतिपूर्ण कब्जा मालिकों को सौंपने का निर्देश दिया था। निष्पादन न्यायालय द्वारा पारित आदेश को एच. एम. टी. द्वारा एक निगरानी याचिका दायर करके चुनौती दी गई थी जो स्वीकार की गई और मामले को निष्पादन न्यायालय को इस निर्देश के साथ रिमाण्ड किया गया कि वह एच. एम. टी. को सुनवाई का अवसर प्रदान करे और विधि अनुसार उचित आदेश पारित करे । इस दौरान, हालांकि, एच. एम. टी. ने राज्य सरकार से भूमि अधिग्रहण के लिए अनुरोध किया और अधिनियम की धारा 28 की उप धारा (1) के अन्तर्गत सार्वजनिक प्रयोजन से भूमि अधिग्रहण यानि औद्योगिक विकास के लिए अधिसूचना दिनांक 13 नवम्बर

1997 को जारी की गई जो कि अधिकारिक राजपत्र में दिनांक 11 दिसम्बर 1997 को प्रकाशित की गई। भूमि के मालिकों को अधिसूचना जारी करने के बारे में पता चला तब उन्होंने संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत कर्नाटक उच्च न्यायालय की अधिकारिता के तहत एक लिखित याचिका दायर की। जिसमें यह आक्षेप लगाया गया कि यह अधिसूचना दुर्भावनापूर्ण आशय से मालिकों को सक्षम अधिकारिता के न्यायालय द्वारा पारित डिक्री की पालना में कब्जा प्राप्त करने के अधिकार को समाप्त करने के लिए जारी की गई थी। अधिसूचना को रद्द करने के लिए तथा सक्षम अधिकारिता को 39 गुंठा भूमि सर्वे संख्या 113/3 के संबंध में सक्षम न्यायालय द्वारा पारित डिक्री जो कि अंतिम हो है, की पालना में कब्जा दिलाने की प्रार्थना की गई।

4. विद्वान एकल न्यायाधीश के समक्ष अपीलार्थीगण (उच्च न्यायालय के समक्ष प्रत्यर्थीगण) की ओर से यह अभिकथन किया गया कि याचिका अपरिपक्व थी और इस आधार पर याचिका अस्वीकार किए जाने योग्य थी कि अधिसूचना केवल मात्र प्रारंभिक अधिसूचना थी, अंतिम अधिसूचना भूमि मालिकों द्वारा यदि कोई आपत्ति हो तो उनके निस्तारण के बाद जारी की जानी थी। इसके साथ ही यह अभिकथन किया गया कि भूमि मालिक प्रथम दृष्टया यह स्पष्ट करने में असफल रहे कि उपरोक्त कार्य दुर्भावनापूर्ण और शक्तियों का प्रयोग संभाव्य या संपार्श्विक उद्देश्य के लिए किया गया। सार्वजनिक उद्देश्य के लिए भूमि का अधिग्रहण करने की मांग की गई थी,

अर्थात्, बोर्ड के माध्यम से उद्योग के विकास के लिए जबकि दुर्भावना के आरोप निराधार थे । यह भी आग्रह किया गया कि दीवानी अदालत ने कानून के अनुसार भूमि अधिग्रहण करने की स्वतंत्रता सुरक्षित रखी थी। लेकिन अन्यथा भी, न्यायालय की डिक्री द्वारा राज्य की शक्ति को छीन नहीं सकता था। इसके अलावा, भूमि आधिकारिक गोपनीयता अधिनियम, 1923 के प्रावधानों द्वारा इसे 'निषिद्ध क्षेत्र' घोषित किया गया।

5. विद्वान एकल न्यायाधीश ने मामले को 'शोषण' के रूप में वर्णित किया कि इसके अन्तर्गत वैधानिक प्रावधान सार्वजनिक उद्देश्य के नाम पर और घोषित किसी व्यक्ति के न्यायपूर्ण अधिकारों को विफल करने के लिए है और यह अभिनिर्धारित किया कि अधिकारियों द्वारा अपनी शक्ति का प्रयोग दुर्भावनापूर्ण तरीके से किया गया और जो कार्रवाई के लिए उत्तरदायी था, उसे अपास्त कर दिया गया। न्यायालय ने नोट किया कि प्रत्यर्थीगण को विवादग्रस्त भूमि में स्वामित्व या हित अथवा अधिकार नहीं था, जिसे खारिज कर दिया गया और लगभग 18 वर्ष से कब्जा बनाए रखना जारी रखा । मालिकों द्वारा किये गये अनुरोध पर जायदाद को खाली करने से मना कर दिया, जब वाद डिक्री किया गया और अपील खारिज कर दी गई तब आगे कोई कार्रवाई नहीं की गई जिससे आदेश अंतिम हो गया था। इसमें मालिकों के पक्ष में डिक्री के बावजूद, कब्जा कभी भी सफल वादीगण को वापस नहीं किया गया और उन्हें निष्पादन कार्यवाही से रोक दिया गया । जब कब्जे का वारंट जारी हुआ तब न्यायालय की डिक्री की पालना

करने और भूमि का कब्जा देने की बजाय कम्पनी द्वारा बोर्ड से अधिनियम के तहत भूमि अधिग्रहण की कार्यवाही करने का निवेदन किया गया और धारा 28(1) के अन्तर्गत अधिसूचना जारी की गई।

यह भी देखा गया कि राज्य द्वारा अधिसूचना न तो धारा 1 की उप-धारा (3) के तहत और न ही उप-धारा के तहत अधिसूचना धारा 3 की उपधारा (1) के तहत विधि अनुसार जारी की गई थी और जिसमें भूमि का अधिग्रहण करने की मांग की गई थी। इसमें कोई संदेह नहीं है कि न्यायालय ने कहा कि ऐसी अधिसूचनाएं जारी की गई थी, लेकिन तीनों अधिसूचनाएँ, यानी उप-धारा के तहत अधिसूचना धारा 1 की उपधारा (3), धारा 3 की उपधारा (1) व धारा 28 की उपधारा (1) सभी एक ही दिन जारी की गई थी। उनके द्वारा समानांतर दिनांक 11 दिसम्बर 1997 को अधिकारिक राजपत्र में भी प्रकाशित कर दिया गया। ऐसी कार्यवाही विद्वान एकल न्यायाधीश की राय में, शक्ति के दुर्भावनापूर्ण प्रयोग में भूमि के मालिकों को जिनके पक्ष में कब्जे की डिक्री थी, उनको वंचित करने के लिए जारी की गई थी। इसलिए यह कार्यवाही विधि अनुसार गलत थी। तदनुसार, याचिका को स्वीकार किया गया और धारा 28 की उप-धारा (1) के तहत अधिसूचना को अपास्त कर दिया गया।

6. एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश से व्यथित होकर, अपीलार्थीगण द्वारा उसी न्यायालय के समक्ष अपील की गई थी जिसे खण्डपीठ द्वारा अप्रकट

आदेश क माध्यम से खारिज कर दिया गया कि अधिसूचना अधिनियम के प्रावधानों के विपरीत जाकर जारी की गई थी ताकि रिट याचिकाकर्ता जिनके पक्ष में डिक्री थी उसके फल को प्राप्त करने से वंचित किया जा सके ।

7. जब मामला इस न्यायालय के समक्ष आया तो दिनांक 15 मार्च 1999 को नोटिस जारी किया गया । ऐसा प्रतीत होता है कि समझौते की बातचीत की गई थी। अभिलेख से यह प्रतीत होता है कि मामले को समय समय पर राजीनामा या समझौता यदि कोई हो, उसके लिए स्थगित किया गया था लेकिन समझौता नहीं किया जा सका और 1 दिसंबर, 2000 को अनुमति दी गई।

8. हमने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना है।

9. अपीलार्थीगण के विद्वान वकील ने दृढ़ता से तर्क दिया कि उच्च न्यायालय ने मालिकों द्वारा दायर याचिका को स्वीकार करने और राज्य द्वारा जारी एक वैधानिक अधिसूचना को रद्द करने में कानून की त्रुटि की है। राज्य द्वारा अधिनियम की धारा 28 की उप-धारा (1) के तहत शक्ति का प्रयोग करते हुए जारी एक वैधानिक अधिसूचना को रद्द करने में विधिक त्रुटि की है । उन्होंने कहा कि भूमि अधिग्रहण के लिए वैधानिक अधिसूचना जारी करना राज्य सरकार की शक्ति के भीतर है और उच्च न्यायालय ने दुर्भावनापूर्ण शक्ति के प्रयोग के आधार पर इसे रद्द करना

गलत था। जहाँ तक कब्जे के लिए डिक्री का सम्बन्ध है, वकील द्वारा यह प्रस्तुत किया गया था कि न्यायालय की डिक्री के बावजूद, अधिनियम के तहत राज्य द्वारा वैधानिक शक्ति का प्रयोग किया जा सकता है। यह अधिसूचना प्रारंभिक प्रकृति की थी जो राज्य के भूमि अधिग्रहण के आशय को दर्शाती है और मालिकों के पास यदि कोई आपत्ति हो तो उसे उठाने का अवसर था और उसके पश्चात् अंतिम अधिसूचना जारी की जानी थी । इसलिए यह आग्रह किया गया कि अधिकारियों की ओर से प्रारंभिक आपत्ति उठाई कि याचिका अपरिपक्व थी, प्रस्तावित कार्यवाही के खिलाफ सभी आपत्तियां उठाने के लिए मालिकों को आपत्ति करने का अवसर दिया गया था । यह भी प्रस्तुत किया गया था कि एच. एम. टी. को भूमि की कारखाने के विस्तार के लिए आवश्यकता थी । विवादग्रस्त भूमि का आधिकारिक गोपनीयता अधिनियम, 1923 के प्रावधानों द्वारा कवर की गई थी, जिसमें भूमि को "निषिद्ध क्षेत्र" घोषित किया गया था और उस आधार पर भी भूमि अधिग्रहण आवश्यक था। इसलिए, विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित और खंड पीठ द्वारा पुष्टि किए गए आदेश को अपास्त किया जाना चाहिए।

10. दूसरी ओर, मालिकों के विद्वान वकील ने उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश का समर्थन किया । उन्होंने यह अभिकथन किया कि प्राधिकारियों का प्रारंभिक कार्य गलत था क्योंकि 1 एकड़ 38 गुंठा भूमि को अधिग्रहित किया गया लेकिन उन्होंने सर्वेक्षण संख्या 113/3 नाप 2 एकड़

37 गुंठा सम्पूर्ण भूमि का कब्जा ले लिया इसलिए मालिकों को 39 गुंठा भूमि के वैध स्वामित्व व कब्जे की भूमि से वंचित कर दिया गया । कई अनुरोधों के बावजूद, एच. एम. टी. द्वारा कुछ भी नहीं किया गया तब मालिकों को स्वामित्व और कब्जे की घोषणा के लिए वाद दायर करने के लिए मजबूर किया गया, जो कि डिक्री किया गया और अपील में डिक्री की पुष्टि की गई। इसके बाद भी, कब्जा सफल वादियों को नहीं सौंपा गया और निष्पादन की कार्यवाही की जानी थी । यह उस समय हुआ जब अपीलार्थीगण को कब्जा सौंपने का निर्देश जारी किया गया तभी कार्य को तेजी से आगे बढ़ाया गया और राज्य सरकार से 39 गुंठा भूमि के अधिग्रहण के लिए अधिसूचना जारी करने का अनुरोध किया गया। इसलिए, उच्च न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित करना सही था कि कार्यवाही दुर्भावनापूर्ण की गई थी और अधिसूचना खारिज किये जाने योग्य थी ।

11. कर्नाटक राज्य की विद्वान वकील सुश्री किरण सूरी ने अपीलार्थीगण के मामले का समर्थन किया। उन्होंने अभिकथित किया कि धारा 28 की उप-धारा (1) के तहत जारी अधिसूचना की शक्ति वैधानिक है और जब यह एक प्रारंभिक अधिसूचना थी, तो उच्च न्यायालय को याचिका पर विचार नहीं करना चाहिए था। अंतिम अधिसूचना के बाद ही पीड़ित पक्ष न्यायालय का रुख कर सकता है। इसलिए, यह कथन किया गया कि उच्च न्यायालय अधिसूचना को रद्द करने में गलत था।



12. पक्षकारों के विद्वान वकील को सुनने के बाद, हमारी राय में, उच्च न्यायालय अधिनियम के तहत जारी अधिसूचना को रद्द करने में सही नहीं था। विशेष रूप से, जब यह एक प्रारंभिक अधिसूचना थी जो राज्य के आशय को दर्शाती थी कि राज्य सार्वजनिक उद्देश्य अर्थात् औद्योगिक विकास के लिए भूमि का अधिग्रहण करेगा। इसमें कोई संदेह नहीं कि सर्वेक्षण नं. 113/3 से संबंधित कुल 2 एकड़ 37 गुंठा भूमि के प्रत्यर्थीगण मालिक थे। इसके साथ यह भी सही है कि अधिसूचना दिनांक 29 जून 1978 द्वारा 1 एकड़ 38 गुंठा भूमि अभिग्रहित की गयी उसी क्षेत्र का अवार्ड पारित किया गया। यह भी सही कि 1 एकड़ 38 गुंठा अधिग्रहित भूमि का कब्जा करने की बजाय अपीलार्थीगण द्वारा सर्वेक्षण संख्या 113/3 नाप 2 एकड़ 37 गुंठा सम्पूर्ण भूमि का कब्जा ले लिया गया। इस प्रकार अवैध व अनाधिकृत रूप से 0 एकड़ 39 गुंठा का कब्जा ले लिया गया। इसलिए मालिक 39 गुंठाभूमि के स्वामित्व कब्जे से अवैध तरीके से वंचित करने के विरुद्ध शिकायत के लिए स्वतंत्र थे। जब अतिरिक्त भूमि का कब्जा वापस करने के अनुरोध को अपीलार्थीगण द्वारा नजरअंदाज कर दिया गया तब स्वाभाविक रूप से उन्होंने न्यायालय में कार्यवाही की एवं डिक्री प्राप्त की गयी। यह विवाद में नहीं है कि डिक्री की अपील में पुष्टि की गई थी जो अंतिम हो गयी। निष्पादन की कार्यवाही शुरू की गई और उस स्तर पर अपीलार्थीगण ने अधिनियम के तहत भूमि अधिग्रहण करने के लिए राज्य प्राधिकरणों को प्रस्तावित किया। लेकिन सवाल यह है कि क्या

किसी वैध कानून के तहत अधिग्रहण की कार्यवाही शुरू करने में राज्य प्राधिकरणों की कार्यवाही को अवैध, गैर कानूनी या दुर्भावनापूर्ण शक्ति प्रयोग कहा जा सकता है? जहां तक उच्च न्यायालय का संबंध है, उसने अभिनिर्धारित किया कि अधिकारियों द्वारा अपनाया गया मार्ग विधि के विपरीत था। यह न्यायालय के दृष्टिकोण में परिलक्षित होता है जिसमें विद्वान एकल न्यायाधीश ने कहा कि यह उस व्यक्ति के न्याय संगत अधिकारों को विफल करने के लिए सार्वजनिक उद्देश्य के नाम पर वैधानिक प्रावधानों के दोहन का मामला था जिसने अपने पक्ष में डिक्री प्राप्त की थी।

13. हालाँकि, हमारे सुविचारित दृष्टिकोण में, यह दृष्टिकोण न तो कानूनी है और न ही अनुमत है। एक सक्षम न्यायालय द्वारा डिक्री पारित करना एक बात है और प्राधिकरण द्वारा वैधानिक शक्ति का प्रयोग पूरी तरह से एक अलग बात है। किसी मामले में प्रस्तुत साक्ष्य और अभिलेख पर रखी गई सामग्री के आधार पर यह निष्कर्ष निकालना संभव है कि कार्यवाही दुर्भावनापूर्ण या संपार्श्विक उद्देश्य से या शक्ति के दुरुपयोग में की गई है। लेकिन, हमारी राय में, न्यायालय द्वारा डिक्री के बाद प्रारंभिक अधिसूचना जारी करना स्वतः ही कमजोर और दुर्भावनापूर्ण नहीं हो सकता। इसलिए, हमारे लिए, प्राधिकारी प्रारंभिक आपत्ति उठाने में सही था कि याचिका अपरिपक्व थी क्योंकि अधिनियम की धारा 28 की उप-धारा (1) के तहत अधिसूचना जारी करके, राज्य द्वारा सार्वजनिक उद्देश्य यानी उद्योग

के विकास के लिए भूमि अधिग्रहण करने का आशय जाहिर किया था। अपीलार्थीगण के तर्क की सराहना करने के लिए, हम उस खंड को पुनः प्रस्तुत कर सकते हैं जो इस प्रकार है:-

धारा 28. भूमि अधिग्रहण- 1. यदि किसी भी समय, राज्य सरकार की राय में, बोर्ड द्वारा विकास के उद्देश्य से या इस अधिनियम के उद्देश्यों को आगे बढ़ाने के लिए किसी अन्य उद्देश्य के लिए किसी भूमि की आवश्यकता है, तो राज्य सरकार अधिसूचना द्वारा ऐसी भूमि का अधिग्रहण करने के अपने आशय की सूचना दे सकती है।

2. उप-धारा (i) के तहत अधिसूचना के प्रकाशन पर राज्य सरकार मालिक को या जहां मालिक अधिभोगकर्ता नहीं है, वहां भूमि के अधिभोगकर्ता पर और ऐसे सभी व्यक्तियों पर, जिनके बारे में माना जाता है कि वे इसमें हित रखते हैं, उन्हें नोटिस प्राप्ति से तीस दिनों के भीतर यह कारण दर्शित करने के लिए कि भूमि का अधिग्रहण क्यों नहीं किया जाना चाहिए।

3. मालिक द्वारा दिखाए गए कारण, यदि कोई हो, पर विचार करने के बाद भूमि और उसमें रुचि रखने वाले किसी अन्य व्यक्ति द्वारा, और ऐसे मालिक और व्यक्ति को सुनवाई का अवसर देने के बाद, राज्य सरकार ऐसे आदेश पारित कर सकती है जो वह उचित समझे। 4. उप-धारा (3) के तहत आदेश पारित किए जाने के बाद, जहां राज्य सरकार का समाधान हो जाता

है कि इसके लिए किसी भी भूमि का अधिग्रहण किया जाना चाहिए। उप-धारा (1) के तहत जारी अधिसूचना में निर्दिष्ट उद्देश्य के आशय की घोषणा आधिकारिक राजपत्र में अधिसूचना द्वारा की जाएगी।

5. घोषणा के आधिकारिक राजपत्र में प्रकाशन पर उप-धारा (4) के तहत, भूमि पूरी तरह से राज्य सरकार के पास निहित होगी जो सभी बाध्यताओं से मुक्त होगी।

6. जहाँ कोई भूमि उप धारा (5) के अधीन राज्य सरकार में निहित है। राज्य सरकार लिखित सूचना द्वारा, किसी भी व्यक्ति को, जो भूमि के कब्जे में हो सकता है उसको राज्य सरकार या इस सम्बन्ध में अधिकृत किसी भी व्यक्ति को नोटिस प्राप्ति के 30 दिवस के भीतर भूमि को समर्पण करने या उसका कब्जा सौंपने का आदेश दे सकती है।

7. यदि कोई व्यक्ति उप धारा (5) के तहत दिए गए आदेश का पालन करने से इनकार करता है या असफल रहता है। राज्य सरकार या इस संबंध में राज्य सरकार द्वारा प्राधिकृत कोई भी अधिकारी भूमि का कब्जा ले सकता है और उस उद्देश्य के लिए ऐसे बल का उपयोग कर सकता है जो आवश्यक हो।

8. जहां बोर्ड के लिए भूमि का अधिग्रहण किया गया है, वहां राज्य सरकार भूमि पर कब्जा करने के बाद जिस उद्देश्य के लिए भूमि अधिग्रहित की गयी है, उसके लिए बोर्ड को हस्तांतरण कर सकती है।

14. उपरोक्त प्रावधान को केवल पढ़ने से यह बहुत स्पष्ट हो जाता है कि यदि राज्य सरकार की राय में बोर्ड द्वारा विकास के उद्देश्य से किसी भूमि की आवश्यकता है, तो ऐसी भूमि के अधिग्रहण के लिए भूमि अधिग्रहण करने के उसके 'आशय' की अधिसूचना जारी की जा सकती है। तदनुसार दिनांक 13 नवंबर, 1997 को अधिसूचना जारी की गई थी। धारा 28 की उप-धारा (2) के तहत राज्य सरकार से भूमि के मालिक या अधिभोगियों और ऐसे सभी ज्ञात या माने जाने वाले व्यक्तियों को भूमि का अधिग्रहण क्यों नहीं किया जाना चाहिए, इसका कारण दिखाने के लिए नोटिस देने की अपेक्षा करती है। उप-धारा (3) राज्य सरकार पर भूमि के मालिक, अधिभोगकर्ता या भूमि में रुचि रखने वाले अन्य व्यक्ति की आपत्तियों पर विचार करने और 'सुनवाई का अवसर' प्रदान करने के बाद ऐसा आदेश पारित करने का दायित्व डालती है जो वह उचित समझे। यदि वह संतुष्ट हो कि कोई भी भूमि अधिग्रहित की जानी चाहिए तो उसकी उप-धारा (4) के तहत एक घोषणा की जा सकती है जिसे आधिकारिक राजपत्र में अधिसूचित किया जाएगा।

15. इस प्रकार धारा 28 की योजना भूमि अधिग्रहण अधिनियम 1894 के तहत भूमि अधिग्रहण की योजना के समान है। जिसके तहत ऐसी प्रारंभिक अधिसूचना जारी की जाती है, भूमि में रुचि रखने वाले व्यक्तियों को सुनवाई का अवसर दिया जाता है और उसके बाद ही अंतिम अधिसूचना जारी की जा सकती है। अधिग्रहण के खिलाफ आपत्तियां उठाने के स्तर पर,

प्रत्यर्थीगण के लिए सभी तर्क उठाने के लिए अवसर खुला था । ऐसी आपत्तियों के बावजूद, यदि राज्य द्वारा अंतिम अधिसूचना जारी की जाती है, तो उनके लिए संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत उचित कार्यवाही करने या उच्च न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में याचिका प्रस्तुत कर सकते थे । हालांकि, उच्च न्यायालय ने याचिका पर विचार किया और प्रारंभिक अधिसूचना को राज्य और अपीलार्थीगण द्वारा उठायी गयी पोषणीयता की आपत्ति को दरकिनार कर खारिज कर दिया ।

16. उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचने में भी सही नहीं था कि सक्षम न्यायालय द्वारा डिक्री पारित किये जाने के बाद अधिनियम के तहत राज्य द्वारा कोई अधिसूचना जारी नहीं की जा सकती थी । राज्य द्वारा प्रयोग की गयी शक्ति वैधानिक प्रकृति की थी । यद्यपि मालिकों के पक्ष में डिक्री थी फिर भी ऐसी अधिसूचना जारी की जा सकती थी । ऐसी ही एक समान परिस्थिति हमारे सामने इस प्रकरण आंध्र प्रदेश व अन्य बनाम गोवर्धनलाल पिट्टी, [2003] 4 एस. सी. सी. 739 में आई । गोवर्धनलाल के प्रकरण में जी. से संबंधित एक स्कूल की इमारत किरायेदार के रूप में राज्य के कब्जे में थी। बेदखल करने का आदेश पारित किया गया और राज्य को एक विशेष अवधि के भीतर संपत्ति का कब्जा जी को सौंपने का निर्देश दिया गया। इसके बाद राज्य ने सार्वजनिक उद्देश्य अर्थात् एक स्कूल के लिए भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894 के तहत अधिग्रहण की कार्यवाही की गयी । जी. द्वारा कार्यवाही को दुर्भावनापूर्ण होने के आधार पर

चुनौती दी गई । उच्च न्यायालय ने इस तर्क को बरकरार रखते हुए कहा कि 'कानून में द्वेष' था क्योंकि सक्षम न्यायालय द्वारा पारित डिक्री को समाप्त करने के लिए कार्यवाही शुरू की गई थी । राज्य द्वारा इस न्यायालय की ओर रूख किया ।

17. अपील स्वीकार की गयी और उच्च न्यायालय का आदेश अपास्त किया गया और इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि यह विद्यालय 1954 से वहाँ था और शहर के मध्य में रहने वाले बच्चों की शैक्षिक आवश्यकताओं को पूरा कर रहा था। इसलिए यह तर्क नहीं दिया जा सकता कि कोई वास्तविक सार्वजनिक उद्देश्य नहीं था। अतः तथ्यों और परिस्थितियों में अधिनियम के तहत शक्ति को दुर्भावनापूर्ण नहीं माना जा सकता था।

18. न्यायालय द्वारा कानूनी दुर्भावना की अवधारणा को भी समझाया। कानूनी रूप से परिभाषित शब्दों और वाक्यांशों का उल्लेख करते हुए लंदन बटरवर्थ्स, 1989 के तीसरे संस्करण के अनुसार न्यायालय ने कहा;

" द्वेष का कानूनी अर्थ है "किसी पक्ष के प्रति दुर्भावना या विरोध"। और कोई कार्रवाई करने में कोई अप्रत्यक्ष या अनुचित उद्देश्य " जिसे कभी-कभी "तथ्यों में द्वेष" के रूप में वर्णित किया जाता है। "कानूनी द्वेष" या "कानून में

द्वेष"का अर्थ है " कानून के विपरीत जाकर किया गया कुछ कृत्य "। दूसरे शब्दों में- यह एक ऐसा कार्य है जो बिना उचित या विवेकपूर्ण तरीके से गलत तरीके से और जानबूझकर किया गया है और जरूरी नहीं कि खराब भावना से या आशय से कार्य किया गया ।"

19. यह देखा गया कि जहां द्वेष के लिए राज्य को जिम्मेदार ठहराया गया था, वास्तव में यह राज्य की ओर से दुर्भावना या व्यक्तिगत दुर्भावना का मामला नहीं हो सकता है। यह केवल कानून में द्वेष हो सकता है, यानी कानूनी दुर्भावना। राज्य, यदि वह भूमि अधिग्रहण करना चाहता है, तो वैधानिक उद्देश्य ना कि किसी अन्य के लिए अपनी शक्ति का उपयोग कर सकता है। यह भी देखा गया कि केवल मात्र मालिकों के पक्ष में डिक्री पारित किये जाने से अधिग्रहण की कार्यवाही आवश्यक थी और उसी अनुरूप अधिसूचना जारी की गयी थी। इस तरह की कार्रवाई को दुर्भावनापूर्ण नहीं माना जा सकता।

20. हस्तगत मामले में भी, रिकॉर्ड से पता चलता है कि 1978 में ही सर्वेक्षण सं. 113/3 की पूरी भूमि का कब्जा अपीलार्थीगण द्वारा अवैध रूप से (39 गुंठों की सीमा तक) ले लिया गया था। भूमि के मालिकों के पक्ष में पारित डिक्री के कारण ही अपीलार्थीगण ने महसूस किया कि कानून



के अनुरूप भूमि का अधिग्रहण करने की कार्यवाही की जाना उचित है और इसलिए, राज्य से अधिनियम के तहत कार्यवाही करने का अनुरोध किया गया और एक अधिसूचना जारी की गई। इस तरह के कार्य को अवैध नहीं कहा जा सकता है, विशेष रूप से तब जबकि अधिसूचना प्रारंभिक प्रकृति की थी और अधिनियम के तहत मालिकों को सुनवाई का अवसर दिया जाना था। उच्च न्यायालय, हमारी सुविचारित राय में, गलत था और उसने याचिका पर विचार करने और उसे धारा 28 की उप-धारा (1) के तहत अधिसूचना जारी करने की स्टेज पर अनुमति देने में कानून की त्रुटि की है

21. विद्वान एकल न्यायाधीश ने भी राज्य प्राधिकारी द्वारा अधिनियम की धारा 1 की उप धारा (3) और धारा 3 की उप धारा (1) के तहत जो अधिसूचना जारी की गई, उसे गलत माना गया । अधिनियम की धारा 1 की उप धारा (2) में कहा गया है कि 'अधिनियम' पूरे कर्नाटक राज्य में लागू है। उप-धारा (3) इस प्रकार है:-

(3) अध्याय VII को छोड़कर यह अधिनियम तुरंत लागू हो जाएगा, अध्याय VII ऐसे क्षेत्र में ऐसी तारीख से लागू हो जायेगा जिसकी राज्य सरकार समय-समय पर अधिसूचना द्वारा निर्दिष्ट कर सकती है

22. यह ध्यान देने योग्य है कि अध्याय VII 'भूमि के अधिग्रहण और निस्तारण' से संबंधित है। अध्याय II 'औद्योगिक क्षेत्रों' से संबंधित है। धारा 3 "औद्योगिक क्षेत्रों की घोषणा" के सम्बन्ध में प्रावधान करती है

जैसा कि अधिनियम की धारा 2 की उपधारा (6) में वर्णित है। धारा 3 की उप-धारा (1) राज्य सरकार को किसी भी क्षेत्र को 'औद्योगिक क्षेत्र' घोषित करने में सक्षम बनाती है। जिसमें लिखा है:-

(1) राज्य सरकार इस अधिनियम के उद्देश्य के लिए किसी भी क्षेत्र को औद्योगिक के क्षेत्र के रूप में अधिसूचना द्वारा घोषणा कर सकती है।

23. यह अभिलेख में है कि धारा 1 की उप-धारा (3) व धारा 3 की उप-धारा (1) के तहत राज्य द्वारा अधिसूचनाएं जारी की गई थीं। हालाँकि, विद्वान एकल न्यायाधीश ने कहा कि निष्पादन न्यायालय के निर्णित ऋणी को जायदाद का कब्जा देने के निर्देश दिये जाने के बाद राज्य को अधिसूचनाएं जारी करने के लिए प्रस्तावित किया गया। उन्होंने उद्योग के कथित विस्तार के लिए न्यायालय के अवलोकन के लिए सामग्री प्रस्तुत नहीं करने में राज्य प्राधिकरणों के साथ भी गलती पाई। विद्वान न्यायाधीश ने यह कहा कि यह निष्पादन कार्यवाही में निर्णित ऋणी द्वारा भूमि को औद्योगिक विकास की आवश्यकता का प्रकरण नहीं था और इसलिए भूमि अधिग्रहण का आदेश लिया गया था। विद्वान एकल न्यायाधीश के अनुसार, भूमि क्षेत्र के एक कोने में स्थित थी और खाली पड़ी थी।

24. हमारी राय में, विद्वान एकल न्यायाधीश का दृष्टिकोण विधिक या विधि अनुरूप नहीं कहा जा सकता। राज्य प्राधिकरणों को औद्योगिक क्षेत्र के विस्तार या उद्योग के विकास के बारे में न्यायालय के 'अवलोकन' के लिए

सामग्री प्रस्तुत करने की आवश्यकता नहीं थी। निर्णित ऋणी द्वारा निष्पादन न्यायालय के समक्ष यह अभिकथन किया जाना अपेक्षित नहीं था कि भूमि की उद्योग के विकास के लिए आवश्यकता थी । विद्वान एकल न्यायाधीश के उपरोक्त कारणों की तुलना की गई इसलिए हमारी राय में अधिसूचना को खारिज किये जाने का आधार नहीं हो सकता था । विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा यह भी यह भी कहा गया कि धारा 1 की उपधारा (3), धारा 3 की उपधारा (1) और धारा 28 की उपधारा (1) के तहत समानांतर जारी की गई अधिसूचनाएं अवैध थी ।

25. इस संबंध में, विद्वान एकल न्यायाधीश ने उल्लेख किया -

" 10. यह आक्षेपित अधिसूचना से देखा गया कि वह प्रथम प्रत्यर्थी द्वारा जारी की गई, दूसरे प्रत्यर्थी द्वारा नहीं की गई । प्रथम प्रत्यर्थी का मामला यह नहीं है कि प्रत्यर्थी सं.5 का कारखाने के विस्तार के लिए भूमि का अधिग्रहण न्यायालय द्वारा डिक्री पारित किये जाने से पूर्व विचार किये जाने के लिए लम्बित था । वहीं दूसरी ओर द्वितीय प्रत्यर्थी द्वारा यह अभिकथित किया गया कि प्रश्नगत भूमि को प्रत्यर्थी सं.5 के कारखाने के विस्तार के लिए अधिग्रहण चाहा गया था । द्वितीय प्रत्यर्थी का यह मामला नहीं है कि उन्होंने पांचवे प्रत्यर्थी के फेक्ट्री के विस्तार के लिए प्रश्नगत भूमि का अधिग्रहण करने के लिए सरकार को अनुशंसा की हो और उद्योग के विस्तार के लिए "औद्योगिक क्षेत्र" की घोषणा के संबंध में

अवलोकन के लिए रिकॉर्ड प्रस्तुत नहीं किया गया । यह देखने के लिए उपलब्ध सामग्री है कि प्रथम प्रत्यर्थी ने अधिनियम की उप-धारा (3) के तहत अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए औद्योगिक क्षेत्र और अध्याय 7 के तहत आवेदन की घोषणा करने वाली समग्र अधिसूचना जारी की गई। यह भी देखने योग्य है कि विचाराधीन भूमि के संबंध में अधिसूचना जारी की गई है और कोई अन्य भूमि शामिल नहीं की गई है। अधिनियम की धारा 3 की उपधारा (1) के अंतर्गत अधिसूचना दिनांक 11 दिसम्बर 1997 को कर्नाटक राजपत्र के पेज संख्या 253 में भूमि का उल्लेख किये बिना अधिसूचना जारी की गई । अधिनियम की धारा 1 की उपधारा (3) के तहत जारी अधिसूचना का उसी राजपत्र में प्रकाशन पेज संख्या 254 पर और जिस भूमि के सम्बन्ध में अधिसूचना जारी की गई उसका प्रकाशन पेज संख्या 255 पर किया गया । वही अनुसूची का पेज संख्या 256 पर प्रकाशन किया गया जिसका उद्देश्य पता नहीं था । ”

“11. अधिनियम की धारा 3 की उपधारा (1) के अनुसार राज्य सरकार किसी भी क्षेत्र को एक अधिसूचना द्वारा औद्योगिक क्षेत्र घोषित करेगी और अधिनियम की धारा 3 की उप धारा (1) के अन्तर्गत अध्याय 7 के प्रावधानों के अनुसार औद्योगिक क्षेत्र की घोषणा की अधिसूचना अधिनियम की धारा 1 की उप धारा (3) के तहत जारी की जानी चाहिए । इसलिए यह स्पष्ट है कि दो भिन्न और

स्वतंत्र अधिसूचनाएं अधिनियम के दो भिन्न भिन्न प्रावधानों के अंतर्गत जारी की जायेगी। भूमि के वर्णन के बिना धारा 3 की उप धारा (1) के अनुसार अनुसूची "डी" के तहत जारी समग्र अधिसूचना और अधिनियम की धारा 1 की उप धारा (3) के तहत जारी अधिसूचना विधि अनुसार अनुज्ञेय नहीं थी। परिणामस्वरूप अधिनियम की धारा 28 की उप धारा (1) के अंतर्गत जारी अधिसूचना अवैध, शून्य और अमान्य है। "

26. विद्वान एकल न्यायाधीश इस तथ्य से अवगत थे कि धारा 28 की उपधारा (1) की अधिसूचना प्रस्ताव के रूप में प्रारंभिक अधिसूचना थी। हालाँकि, उन्होंने अधिकारियों द्वारा उठाई गई प्रारंभिक आपत्ति को नकार दिया।

" 12. प्रत्यर्थागण द्वारा यह तर्क दिया गया था कि याचिका अपरिपक्व होने से खारिज किये जाने योग्य है क्योंकि अधिनियम की धारा 28 की उपधारा (1) के तहत जारी अधिसूचना मात्र एक प्रस्ताव था जो कि याचिकाकर्ता के आपत्तियों के बाद जारी रखा जाता और नहीं भी रखा जाता। सामान्य परिस्थितियों में प्रत्यर्थागण की आपत्तियां तर्कसंगत होगी लेकिन इस मामले के तथ्यों और

परिस्थितियों में जहां प्रत्यर्थागण संख्या 4 और 5 उस भूमि को बनाये रखने पर आमादा है जो उन्होंने अवैध रूप से कब्जा किया है और प्रथम प्रत्यर्थी ने यह स्वीकार कर लिया है कि पुराने इतिहास की जानकारी के बिना भूमि अधिग्रहण का अनुरोध किया गया तथा सी. आर. पी. के निर्णय की तारीख से एक महीने की अवधि के भीतर धारा 28 की उपधारा (2) व (3) के तहत तर्क असमर्थनीय है जो कि एक खाली औपचारिकता होगी। प्रत्यर्थागण ने यह दिखाने के लिए कोई सामग्री प्रस्तुत नहीं की कि प्रश्नगत भूमि आधिकारिक गोपनीयता अधिनियम के प्रावधानों के अंतर्गत अधिशाषित होती है। आम जनता के लिए भूमि पर प्रवेश करना वर्जित होने से यह पर्याप्त नहीं है कि प्रश्नगत भूमि को आधिकारिक गोपनीयता अधिनियम के प्रावधानों के तहत "निषिद्ध क्षेत्र" घोषित किया गया है। विशेष रूप से प्रत्यर्थी सं.4 व 5 का आचरण जिनके उद्देश्य के लिए भूमि का अधिग्रहण किया गया स्पष्टतः दुर्भावनापूर्ण और सक्षम अधिकारिता के न्यायालय द्वारा पारित डिक्री को विफल करने के लिए किया गया था।

27. विद्वान न्यायाधीश के अनुसार, इसलिए सुनवाई का अवसर देना केवल एक खाली औपचारिकता थी और क्योंकि यह

राज्य द्वारा दुर्भावनापूर्ण शक्ति का प्रयोग मालिकों को प्राप्त की गई डिक्री के फल से वंचित करने के लिए था इसलिए वे अधिसूचना को बिना किसी विलम्ब के रद्द करने की राहत प्राप्त करने के हकदार थे।

28. हमारे निर्णय में, विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा इस तरह का दृष्टिकोण अपनाना और अधिसूचना को रद्द करना गलत था। इस तरह के दृष्टिकोण को बनाए रखने से अधिनियम के तहत वैधानिक प्रावधान या अन्य अधिनियमों में (उदाहरण के लिए, भूमि अधिग्रहण अधिनियम, 1894) के प्रावधान निरर्थक और बेकार होंगे। हमारी राय में विद्वान एकल न्यायाधीश यह मानने में भी गलत थे कि राज्य प्राधिकारी धारा 1 की उपधारा (3), धारा 3 की उपधारा (1) और धारा 28 की उपधारा (1) के समानांतर अधिसूचनाएं जारी करने में गलत थे। इस प्रकार की अधिसूचना जारी करने की कोई रोक नहीं थी और ना ही मुख्य प्रत्यर्थागण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा ऐसा कोई प्रावधान दिखाया गया जो राज्य को ऐसा करने से रोकता हो। इस आधार पर भी भूमि मालिकों को कोई मदद नहीं मिल सकती।

29. विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश खण्ड पीठ द्वारा पुष्टि किये जाने योग्य नहीं था। दुर्भाग्य से खण्ड पीठ द्वारा प्रकरण के सभी

तथ्यों व परिस्थितियों पर गौर किये बिना एकल न्यायाधीश के आदेश की पुष्टि कर दी गई इसलिए वह आदेश भी अपास्त किये जाने योग्य है ।

30. पूर्वगामी कारणों से, अपील स्वीकार किये जाने योग्य है इसलिए स्वीकार की जाती है । विद्वान एकल न्यायाधीश और खण्ड पीठ द्वारा पुष्टि किये गये आदेश अपास्त किये जाते हैं । संबंधित प्राधिकारी धारा 28 की उपधारा (1) के तहत जारी अधिसूचना के आधार पर उचित कार्यवाही करने के लिए स्वतंत्र है । यह कहते हुए कि सभी कार्यवाहियों को अधिनियम की धारा 28 के अनुसार करना होगा और भूमि मालिक 1978 की अधिसूचना के अंतर्गत सभी तर्क उठाने के लिए स्वतंत्र होंगे । भूमि अधिग्रहण 1 एकड़ 38 गुण्ठा का किया गया लेकिन अपीलार्थीगण द्वारा अतिरिक्त 39 गुण्ठा भूमि का भी कब्जा ले लिया गया । इस संबंध में निवेदन अनुसार 39 गुण्ठा भूमि का कब्जा उन्हें वापस नहीं किया गया जिसके कब्जे के लिए वाद दायर किया गया जिसमें उनके पक्ष में डिक्री पारित की गई जो कि अपीलीय न्यायालय द्वारा पुष्टि की गई और वह अंतिम हो गई । इसके बाद भी निष्पादन कार्यवाही जारी रखी गई और अपीलार्थीगण को उन्हें कब्जा देने का आदेश दिया गया । इस स्तर पर धारा 28 की उपधारा (1) के तहत अधिसूचना जारी की गई । जब भी इस संबंध में ऐसी आपत्तियां ली जायेगी तो प्राधिकारी द्वारा विधि अनुसार उचित आदेश पारित किया जायेगा । पक्षकारों के सभी तर्क खुले रखे जाते हैं तथा हम यह भी स्पष्ट करते हैं कि इसमें अभिव्यक्त कोई भी राय एक तरफ या दूसरी ओर के लिए नहीं



समझी जाये । सभी पक्षकारों को प्राधिकारियों के समक्ष अपने तर्क रखने की स्वतंत्रता है ।

31. अपील का तदनुसार निर्णय किया जाता है। खर्च के संबंध में कोई आदेश नहीं है ।

अपील का निपटारा किया गया।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी यास्मिन खान (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

**अस्वीकरण:** यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।